क्राँतिकारी और रेलवे गार्ड : श्री शचेन्द्र बख्शी

काकोरी षड्यंत्र केस अपने समय का सबसे बड़ा क्राँतिकारी मुकदमा था। इस मुकदमें में बीस देशभक्तों को सजा मिली थी। राम प्रसाद बिस्मिल, रोशन सिंह, राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी तथा अशफाकउल्ला खां को फाँसी दे दी गयी और वे शहीद हो गये। शचीन्द्रनाथ सान्याल और मुझे आजन्म काले पानी की सजा मिली। मन्मथनाथ गुप्त को चौदह साल, राजकुमार सिन्हा, रामकृष्ण खत्री, जोगेश चटर्जी आदि को दस-दस साल और शेष को सात-सात और पांच-पांच साल की सजायें दी गयीं। अपील में कुछ लोगों की सजायें बढ़ायी भी गयी थीं।

इस मुकदमें में हमें फँसाने के लिए सरकार ने कोई कसर नहीं छोड़ी। लाखों रुपये फीस देकर सरकार ने सबसे अच्छे वकीलों को नियुक्त किया। स्पेशल मैजिस्ट्रेट, स्पेशल जज भी नियुक्त किये गये।

सफाई के लिए प्रभावशाली डिफेन्स कमेटी बनायी गयी थी, जिसमें पंडित मोती लाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, गोविन्द बल्लभ पन्त, मोहनलाला सक्सेना आदि थे, जो बाद में उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री भी बने थे।

इस षड्यंत्र केस का 'काकोरी केस' के नाम से मशहूर होने का आधारभूत कारण यह था कि हरदोई-लखनऊ के दरम्यान जिस स्टेशन के पास पैसेन्जर ट्रेन को रोककर रेलवे का खजाना लूटा गया था, उस स्टेशन का नाम काकोरी था।

9 अगस्त, 1925 क दिन 8 डाउन पैसेन्जर ट्रेन गार्ड जगन्ननाथ प्रसाद के चार्ज में थी। ट्रेन डकैती से सबंधित सरकारी गवाहों में जिसने सर्वाधिक समय तथा क्राँतिकारियों को दखा था, वह था गार्ड जगन्नाथ प्रसाद। वह डकैती शुरू होने के वक्त से लगातार पैंतीस मिनट तक देखता रहा। शेष गवाहों में से किसी ने भी हमें दो-चार सेकेण्ड से ज्यादा नहीं देखा। कुछ लोगों ने डकैती शुरू होने से पहले हमें साधारण मुसाफिर की स्थिति में कुछ क्षणों तक देखा था।

वस्तुतः घटना इस प्रकार थी-

सन् 1925 तक उत्तर प्रदेश में क्राँतिकारी संगठन मजबूत हो गया था और संगठन में तेजी भी आ गयी थी। जुलाई के अंत में हमें खबर मिली कि जर्मनी से पिस्तौलों का चालान आ रहा है। कलकत्ता बन्दरगाह पहुँचने से पहले ही नकद रुपया देकर उसे प्राप्त करना था। एतदर्थ काफी रुपयों की आवश्यकता पड़ी और पार्टी के सामने डकैती के अलावा कोई अन्य चारा नहीं था।

चूँकि पार्टी निर्णय कर चुकी थी कि भविष्य में किसी की व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं लूटी जाएगी, इसलिए लखनऊ के पास ट्रेन रोककर सरकारी खजाना लूटने की योजना बनायी गयी। इस की रूपरेखा सुनकर नौजवानों की तबीयत फड़क उठी। उन दिनों नौजवान साथी बहुत चंचल हो उठे थे और कुछ कर गुजरने के लिए उतावले हो रहे थे। "सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है... " वे गाने लग गये थे और उनका मन उसी ऊँचे सुर से बँध गया था। मुझे स्पष्ट याद है कि साथियों में मन्मथनाथ गुप्त, कुन्दनलाल, चन्द्रशेखर 'आजाद' आदि ने मेरे सामने प्रश्न उठाया था कि

अगर रेल का गार्ड अंग्रेज हुआ, तो क्या उसे जिन्दा छोड़ा जाएगा? मेरा उत्तर था - नहीं, उसके लिए एक कारतूस खर्च किया जायेगा। जब साथियों ने खुशियाँ जाहिर करनी शुरू कीं, तब मैंने अपने होंठों पर एक उँगली रख उन्हें रोककर कहा था - चुप, यह बात अपने में ही रखनी चाहिए। यदि रामप्रसाद को इसका पता चल गया और कहीं उसने मना कर दिया, तो सब करा-कराया बण्टाढार हो जाएगा।

यहाँ पर मैं यह बता देना उचित समझता हूँ कि हम क्रान्तिकारी लोग इतने खूँखार नहीं थे। बात दरअसल यह थी कि अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ हमारे मन में संवेदना इतनी तीव्र थी कि बदला लेने की भावना सदा जाग्रत रहती थी।

केवल अकेले अशफाकउल्ला खाँ ने इस योजना का विरोध किया और आखिर तक करते रहे। उनका कहना था कि हमारा दल अभी इतना मजबूत नहीं है कि हम ब्रिटिश साम्राज्य को खुली चुनौती दे सकें। लेकिन कोई यह चेतावनी सुनने के मूड में नहीं था। अशफाक यही रट लखनऊ तक लगाते रहे और काकोरी स्टेशन तक पहुँचकर भी रामप्रसाद से बोले - मान जाओ राम, अब भी लौट चलो, यह काम नहीं होना चाहिए।

नतीजा यह हुआ कि डकैती का काम शुरू करने का भार रामप्रसाद ने मेरे ऊपर डाला। मैंने रामप्रसाद को बताया कि अशफाक और राजेन्द्र लाहिड़ी को साथ लेकर मैं सेकेण्ड क्लास की जंजीर खींचकर ट्रेन रोक दूंगा तथा उतरकर गार्ड को पकड़ लूंगा। रामप्रसाद ने इस सुझाव को पसंद किया और बताया कि वह बचे हुए छह साथियों को लेकर तीसरे दर्जे में बैठेंगे और ट्रेन रुकने पर हम लोगों से आ मिलेंगे।

जब मैंने काकोरी स्टेशन पर लखनऊ के लिए तीन सेकेण्ड क्लास के टिकट खरीदने के लिए नोट बढ़ाया, तब असिस्टेंट स्टेशन मास्टर घूमकर मेरे चेहरे को गौर से देखने लगा। उसे महान् आश्चर्य हुआ कि इस-छोटे से स्टेशन से तीन सेकेण्ड क्लास के टिकट खरीदने वाला यह व्यक्ति कौन है! मेरे हाथ में रुमाल था और मैं अनायास दूसरी ओर मुंह फेरकर रुमाल से मुंह पोंछने लगा। जब उसने मुझे तीन टिकट और बचे पैसे लौटाए उस वक्त भी वह मुझे घूर-घूर कर देखता रहा, किन्तु मैंने उसे फिर भी मौका नहीं दिया और मुँह पोंछते हुए भी एक हाथ से टिकट और पैसे लेकर मैं चल दिया। मैंने प्लेटफार्म पर जाकर अशफाक और राजेन्द्र को इशारे से बुलाकर अपने साथ रहने के लिए कहा।

पैसेन्जर ट्रेन आयी। हम तीनों सेकेण्ड क्लास का खाली डिब्बा देखकर बैठ गये। गाड़ी चल दी। इतने में एक मुसाफिर डिब्बे में आकर मेरे पास बैठ गया। मैं फौरन घूमकर जंगले के बाहर देखन लगा। सामने के बर्थ पर अशफाक और राजेन्द्र बैठे थे। डिब्बे में बिजली की रोशनी हो रही थी। जब ट्रेन डिस्टेण्ट सिग्नल के पास पहुँच गयी, मैंने अपने साथियों की तरफ मुखातिब होकर पूछा - जेवरों का बक्सा कहाँ रह गया है?

अशफाक ने तुरन्त जवाब दिया - ओ हा, वह तो काकोरी में ही छूट गया है। इतने में मैंने अपने पास लटकती हुई जंजीर खींच दी। मेरे बाद राजेन्द्र लाहिड़ी ने भी अपने पास की जंजीर खींच दी। जंजीर खींचने के बाद मैंने फौरन उठकर दरवाजा खोला और बाहर खड़ा हो गया।

गाड़ी रुक गयी। हम तीनों उतर पड़े तथा काकोरी की ओर चल पड़े। तीन-चार डिब्बों को पार करने के बाद गार्ड साहब मिले, जो हमारी तरफ आ रहे थे। उन्होंने पूछा - जंजीर किसने खींची?

मैंने चलते-चलते बताया कि मैंने खींची है। गार्ड मेरे साथ हो लिया और उसने मुझे रुकने को कहा। उत्तर मं मैंने बताया - काकोरी में हमारा जेवरों का बक्सा छूट गया है, हम उसे लेने जा रहे हैं।

इतने में हम लोग गार्ड के डिब्बे तक पहुँचकर रुक गये। तब तक हमारे अन्य साथी भी वहाँ पहुँच गये थे। हमने पिस्तौल के फायर के साथ मुसाफिरों को आगाह किया कि कोई मुसाफिर न उतरे, क्योंकि हम सरकारी खजाना लूट रहे हैं।

इतने में मेरी निगाह गार्ड साहब पर पड़ी, जो मेरे बगल में ही खड़े थे और इंजन की तरफ नीली बत्ती दिखा रहे थे। मैंने उनकी पसली में पिस्तौल की नली लगा दी और एक हाथ से उनकी बत्ती छीन ली। बत्ती को जमीन पर पटकते हुए एक ठोकर मारकर मैंने गार्ड से कहा - गोली मार दूँगा। नीली बत्ती क्यों दिखा रहा था?

गार्ड जगन्ननाथ प्रसाद ने हाथ जोड़ते हुए गिड़गिड़ाकर कहा- हुजूर! मेरी जान बख्श दीजिए।

मैंने उसे डाँटकर कहा - घास पर लेट जाओ। तब तक घास से न उठो जब तक मैं न कहूँ। यदि बीच में उठे तो जहन्नुम रसीद कर दिए जाओगे।

गार्ड तुरन्त घास पर लेट गया।

तब तक लोहे का सन्दूक गार्ड के डिब्बे से ढकेलकर नीचे गिरा दिया गया और उसे तोड़ा जाने लगा। मैं डिब्बे के पायदान का सहारा लेकर गार्ड की ओर पिस्तौल ताने खड़ा रहा।

मेरे ऐसे पाँच मिनट तक खड़ा रहने के बाद रामप्रसाद ने एकाएक मेरा हाथ पकड़कर अंधेरे में खींच लिया और कहा - क्या कर रहे हो? सारी रोशनी तुम्हारे चेहरे पर पड़ रही है और गार्ड तुमको पहचान रहा है, जबकि और सब साथी अंधेरे में हैं।

मैं तब गार्ड के डिब्बे में चढ़ गया और बत्तियां बुझाने की कोशिश करने लगा, किन्तु स्विच मुझे ढूंढने पर भी नहीं मिला। तब मैंने पिस्तौल के कुन्दे से सारे बल्ब फोड़ डाले और नीचे उतर आया।

रामप्रसाद की यह बात कि गार्ड आपको पहचान रहा है, मेरे मन में चुभ गयी।

लोहे का सन्दूक बड़ी मुश्किल से टूटा। यह अशफाकउल्ला खां की ताकत की करामात थी। ऐक्शन शुरू होने के पहले तक हर तरह से विरोध करने के बावजूद अशफाक ने डकैती शुरू होने पर पूरी तरह साथ दिया।

इन कामों में करीब 35 मिनट लग गये। जब चलने की तैयारी हुई, तब मैंने रामप्रसाद से कहा- सूबेदार साहब, आप लोग बढ़ें। सौ-सवा सौ गज जाकर रुक जाइएगा और सीटी बजाइएगा। मैं आ जाऊंगा। तब तक मैं जरा गार्ड से निपट लूं।

सभी साथी चले गये। मैं अकेला गार्ड जगन्नाथ प्रसाद के पास खड़ा था। सामने ट्रेन खड़ी थी। सारी फिजा शान्त और नि:स्तब्ध। मैं दो-तीन मिनट चुप खड़ा रहा। हमारे सब साथी अंधेरे में ओझल हो गये थे। उनके पैरों की आहछ भी धीरे-धीरे मद्धिम हो चली थी। जब मैंने खामोशी को भंग कर शान्त स्वर में अंग्रेजी में कहा, "वेल गार्ड साहब, डेड मैन कैन नॉट स्पीक।" जिसका मतलब था - मुर्दा आदमी बोल नहीं सकता। मैंने गार्ड से यह भी कहा, "आपने मुझे बिजली की रोशनी में बहुत देर तक देखा है और पहचाना भी है। पुलिस कार्यवाही में आप मुझे पहचानेंगे। इसलिए आपको क्यों न खत्म कर दूँ, ताकि पहचानने का झगड़ा ही खत्म हो जाए।" मैं ये सब बातें धीरे-धीरे बहुत शान्ति से बोलता रहा। गार्ड साहब अपने सामने मौत का नजारा देखकर हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाने लगे और बोले, "हुजूर। मैं आपको कतई नहीं पहचानता हूँ, मुझे मत मारिए।"

मैंने कहा, "सिर्फ एक कारतूस का खर्च है और सब संकट खत्म हो जाएगा।"

गार्ड साहब बड़ी आजिजी से बोले, "मैं आपको कैसे समझाऊँ कि मैं आपको कभी नहीं पहचानूंगा।"

मैंने पूछा, "पुलिस के जोर देने पर भी नहीं?"

उन्होंने कहा, "कभी भी नहीं।"

मैंने फिर पूछा, "यह आपकी प्रतिज्ञा है?"

उन्होंने जोर देकर कहा, "जी हुजूर, यह मेरी प्रतिज्ञा है और अटल प्रतिज्ञा है।"

मैंने कहा, "ठीक है, ऐसी परिस्थिति में मैं आपकी जान बख्शने को तैयार हूँ, लेकिन क्या सबूत है कि आप इस प्रतिज्ञा को भंग नहीं करेंगे।"

गार्ड साहब बहुत जोर देकर बोले, "हुजूर, कुछ भी हो जाए मैं इस प्रतिज्ञा पर अटल रहूँगा और आपको नहीं पहचानूँगा।"

मैंने कुछ सोचा और पूछा कि वह ईश्वर को मानते हैं कि नहीं?

उनके हामी भरने पर और 'जी हां' कहने पर मैंने कहा, "इस वक्त मेरे और आपके बीच जो कुछ बात हुई, उसका साक्षी आपका ईश्वर है। आपने ईश्वर को साक्षी करके यह प्रतिज्ञा की है कि आप मुझको नहीं पहचानेंगे।"

इतने में साथियों की सीटी सुनायी दी। मैंने कहा - ऑल राइट, गार्ड साहब, आपकी जान बख्श दी। मेरे जाने के बाद उठिएगा और आधे घण्टे बाद गाड़ी को आगे बढ़ाइएगा। यह कहकर मैं चल दिया।

इस घटना के एक साल छह महीने बाद मैं बिहार प्रान्त के भागलपुर शहर में गिरफ्तार हुआ। इस बीच में मेरे बहुत से साथी गिरफ्तार हो गये थे। मेरा भी वारण्ट निकल चुका था और मैं फरार हो गया था। मुझे गिरफ्तार कराने वाले को कई हजार इनाम देने की घोषणा की जा चुकी थी। लखनऊ में काकोरी षड्यंत्र का मुकदमा चल रहा था, जिसमें मुखबिरों के बयानों से बहुत से भेद खुल चुके थे। इकबाली मुल्जिम बनवारीलाल बता चुका था कि ट्रेन डकैती में सेकेण्ड क्लास में अशफाकउल्ला, राजेन्द्र लाहिड़ी और मैं था। बनवारी भी ट्रेन डकैती के दस व्यक्तियों में था। बनवारी

लाल के ब्यान से यह जाहिर हो चुका था कि सैकेण्ड क्लास से उतरने के बाद गार्ड से किया गया मेरा वार्तालाप उसने सुन लिया। रेलवे का डाक्टर चंद्रपाल गुप्ता, जो हमारे डिब्बे में आ गया था, राजेन्द्र लाहिड़ी और अशफाक की शिनाख्त कर चुका था। एक मैं ही बाकी बचा था।

मेरी गिरफ्तारी के बाद मैं भागलपुर से सेण्ट्रल जेल, लखनऊ लाया गया। लखनऊ में राजनीतिक कैदी के विशेष व्यवहार के अधिकार पर जेलवालों से मेरा झगड़ा हुआ। इस सिलसिले में मैंने भूख हड़ताल प्रारम्भ कर दी।

गिरफ्तारी के पहले फरारी हालत में बीमारी के कारण मैं काफी दुर्बल हो चुका था। इस अनशन ने मुझको और भी कमजोर बना दिया। अनशन के पाँचवे या छठें दिन मेरी शिनाख्त कराने की कार्यवाही की गयी।

मैजिस्ट्रेट को मालूम था कि मैं अनशन कर रहा हूँ। उन्होंने आकर मुझसे पूछा - क्या शिनाख्त की कार्यवाही स्थगित की जाये?

मुझको मैजिस्ट्रेट से मालूम हुआ कि सवा सौ या डेढ़ सौ आदमी से शिनाख्त कराने में घण्टा-सवा घण्टा से ज्यादा नहीं लगेगा। मैंने अन्य सब परिस्थितियों का विचारकर मैजिस्ट्रेट से कहा - तमाम स्टेशनों से इतने आदमी इकट्ठे होकर परेशान हो रहे हैं। मैं इनके लिए घण्टा-सवा घण्टा तकलीफ झेल लूँगा। शिनाख्त की कार्यवाही खत्म करा दीजिए।

इस कार्यवाही के लिए जेल के एक अहाते में मैजिस्ट्रेट के सामने 5 या 6 कैदियों के साथ मुझको खड़ा किया गया।

मैं लाइन में खड़ा-खड़ा मैजिस्ट्रेट से हँसी-मजाक कर ही रहा था कि मुखबिर बनारसी लाल आया और मुझे पहचान लिया। उसके पीछे इकबाली मुलजिम बनवारी लाल आया और उसने भी मुझे हँसते हुए पहचान लिया। तब मैं बहुत गम्भीर हो गया। दो-चार और गवाह आये, लेकिन कोई भी मुझे पहचान नहीं सका। मुखबिर इन्दुभूषण आया। उसने भी कई चक्कर काटे। सबके चेहरे बहुत गौर से अध्ययन करने के पश्चात् भी मुझका पहचान नहीं सका। उसकी आँखों में देखकर मैंने महसूस किया, वह सचमुच मुझे नहीं पहचान रहा है। मेरे जिस चेहरे से वह परिचित था, उसमें और वर्तमान में असमानता के कारण वह भी मुझे नहीं पहचान सका।

और कई गवाहों के गुजरने के बाद जगन्नाथ प्रसाद मेरे सामने आये। उनके आते ही मैंने उन्हें पहचान लिया। जब वह मेरे सामने से गुजरे तब उसकी आँखों में भी पहचानने की झलक सी देखी, लेकिन वह मुझे न पहचानने का अभिनय करते हुए आगे बढ़ गये। दो चक्कर लगाने के बाद उन्होंने मैजिस्ट्रेट से कहा, "इनमें तो नहीं है।"

मजिस्टट ने फिर से गौर करने को कहा। उसने और दो चक्कर मेरे सामने लगाये। इस बार भी मैंने उसकी आंखों में पहचानने की झलक देखी, लेकिन उन्होंने मेरे बगल वाले व्यक्ति का हाथ पकड़ा। फिर गार्ड साहब बाहर भेज दिए गये।

गार्ड जगन्नाथ प्रसाद के चले जाने के साथ-साथ मेरे मानसपटल पर चलचित्र की भाँति 9 अगस्त, 1925 की सारी घटनाएं रह-रहकर उभरने लगीं।

काकोरी सप्लिमेण्टरी षड्यंत्र केस में अशफाक को फांसी दे दी गयी और मुझको उम्रकैद की सज़ा मिली। जमाना गुजर गया। यू.पी. की सेंट्रल जेलों में बहुत-सी लड़ाइयां लड़ने के बाद और बहुत सारी भूख-हड़तालें करने के बाद मैं रिहा हुआ। मेरे सह साथी भी रिहा हुए।

उस वक्त अपने प्रान्त में कांग्रेस की मिनिस्ट्री थी, जिसने हमें रिहा किया। मैं कांग्रेस में शामिल हुआ और धीरे-धीरे यू.पी. सूबा कांग्रेस कमेटी, लखनऊ में आफिस सेक्रेटरी हा गया।

सन् 1938 की बात है। मैं प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के सभापति पं. जवाहरलाल नेहरू के कहने से रायबरेली के कांग्रेसियों के आपसी झगड़े को तय कराने वहाँ गया हुआ था और वहाँ के सब झगड़ों की जाँच करके लखनऊ लौटने के लिए रायबरेली स्टेशन पर बैठा था। प्लेटफार्म पर पंजाब मेल का इंतजार करते हुए एक बेंच पर बैठकर मैं अखबार पढ़ रहा था।

इतने में एक रेलवे अफसर मेरे सामने आकर खड़ा हो गया। उसक सफेद सूट को मैं देख रहा था। मेरा नाम पुकार कर नमस्ते करने पर जब मैंने सिर उठाया, तब देखा कि वही चिरपरिचित गार्ड जगन्नाथ प्रसाद खड़े हैं।

14 वर्ष बीत जाने पर भी मैंने उन्हें फौरन पहचान लिया। उनकी मूँछें और बढ़ गयी थी तथा उनमें कुछ सफेदी भी आ गयी थी। मैंने हंसकर कहा, "हैलो गार्ड साहब, आप मुझे भूले नहीं हैं।"

गार्ड जगन्नाथ प्रसाद ने उस पुराने लहजे में उत्तर दिया, "नहीं हुजूर, इस जिंदगी में मैं आपको कभी नहीं भूल सकता।"

क्राँतिकारी शचीन्द्रनाथ बख्शी की पुस्तक *वतन पे मरने वालों का...* से साभार (ग्लोबल हारमनी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, उनके बेटे श्री राजेन्द्र बख्शी के सहयोग द्वारा प्राप्त)।

.....